P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-1* (Part-1) September- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

सामन्तवादी मानसिकता के खिलाफ मीरा का विद्रोह : एक जन चेतना

सोहनराम
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय,
अजमेर
म.द.स.वि.वि.,
अजमेर, राजस्थान

सारांश

सगुण काव्यधारा की कृष्ण–भक्ति परम्परा में राजस्थान की मीराबाई का नाम प्रमुख रहा है। मध्यकाल के सामन्ती दौर में मीरा ने अपने काव्य के माध्यम से तत्कालीन समाज में जन चेतना की ज्योति जगाई। एक महिला भक्त कवयित्री होने के नाते तत्कालीन समाज की कुरीतियों, पाखण्ड़ सामन्ती प्रथा, पर्दा–प्रथा जौहर–प्रथा, सगुण–निर्गुण के भेदभाव, जाति व्यवस्था का घोर विरोध भी किया था। उनके काव्य में ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण भावना, एकनिष्ठता, प्रेम तत्व की महत्ता पर जोर दिया था। अन्य वर्ग–भेदों से पृथक रहते हुए सभी में गिरधर गोपाल के दर्शन, साधना मार्ग के सभी विघ्नों के प्रति कृष्ण का आश्रित बन पूर्ण निर्भीक रहना तथा सभी सांसारिक बन्धनों को मिथ्या मानते हुए जीवन में सद्गुणों का विकास करना इत्यादि ही जनमानस हेतु मीरा के मुख्य दिशा–निर्देश माने जाते है।

मुख्य शब्द : सगुण काव्यधारा, कृष्ण–भक्ति, मीराबाई।

प्रस्तावना

मीरा मेड़तिया शाखा के राव दूदाजी की पौत्री, रत्नसिंह की पुत्री और महाराणा सांगा के पुत्र भोजराज की पत्नी थी। मीरा सामन्ती अँधेरे में भक्ति युग की चिंतन, सृजन और मूल्य–बोध की जागरूक धारा की ऐसी लहर रही, जो किसी न किसी रूप में आज भी जीवित है। इतिहास के पन्नों में खोई नहीं है। मध्यकालीन व्यवस्था के विरूद्ध उठे विद्रोह एवं उस युग में जीवन के बदलते इतिहास के एक मोड़ के प्रतीकत्व रूप में मीरा है। वे साहित्य, संगीत और भक्ति की त्रिवेणी रही है। उनके गीतों में उनकी भक्ति ही नही बोलती, विश्व की आधी मानवता का दुःख–दर्द और विद्रोह भी बोलता है। वे कहती हैं–

''हेरी में तो दरद दीवाणी, मेरो दरद न जाणे कोय।
घायल की गति घायल जाणे, जो कोई घायल होय।'' [1]

मध्ययुगीन सामन्तशाही व्यवस्था में लोक व्यवहार दर्शाती ये कहावतें ' लुगाई तो पग री जूती है, फाट्जा तो दूजी ले लो' या फिर 'लुगाई तो लुक्योडी ही भली' आदि लोक मान्यताएं। ऐसी सामाजिक व्यवस्था व परिवेश में जन्मी, पली व बढ़ी मीरा का अपनी दृढ इच्छा शक्ति, जन चेतना समेटे हुए एक असाधारण व्यक्तित्व की धनी मीरा ने सामाजिक विरोधी और झूठे लाँछनों, रूढ़िगत परम्परावादी समाज से तन्मय की उपेक्षा करके कृष्ण में अगाध श्रद्धा अपूर्व निष्ठा से तन्मय होकर गाती रही–

''हरि म्हारा जीवन, प्राण आधार
और आसरौ नहीं था बिन, तीनों लोक मंझार
आप बिना म्हानै कंई नीं सुहावै
निरख्यौ सब संसार।'' [2]

जब कोई समाज की धारा के विपरीत कार्य करता है तो चेतना के प्रतीक के रूप में लिया जाना स्वाभाविक है। मध्यकालीन सामन्ती व्यवस्था में समाज की जो दशा रही, जिसमें सामाजिक मर्यादाओं की पालना अनिवार्य थी। मीरा इन झूठी सामाजिक मर्यादाओं और कुल–परम्पराओं को त्यागकर सामाजिक चेतना की प्रतीक बनी। मीरा के शब्द, बिना मुखौटों के आत्मनिवेदन करते है। छल–छद्म दोनों अपरिचित सीधे अंतरात्मा स्वर में निकले हैं, जहाँ कला की चतुराइयाँ डूब जाती हैं और जीवन की लय सीधे देशकाल को संबोधित करती हैं। उनका व्यक्तित्व आकर्षण रूप, मधुर स्वर, राठौड़ राज परिवार की सुरक्षा, अडिंग आस्था न झुकने का संकल्प, पर इनके बावजूद एक अनातंकित मूल्य बोध और गहरी मानवीयता उन्होंने मनुष्य को ही नहीं भगवान को भी मानवीय बना दिया। मध्यकालीन युग में सामन्तवाद के चलते समाज में सामन्तीय व्यवस्था में

सत्तावादी राजाओं के बनते–बिगड़ते पारस्परिक सम्बन्ध, वीरता और बलिदान का समाहार थी। उनका मूल स्वर था–संघर्ष। सामाजिक दृष्टि से देखा जाये तो यह सबसे अधिक सुखी और सम्पन्न वर्ग था। यह वर्ग भोग विलास और वैभव में मग्न था। सामन्ती सत्ता न्याय पर नहीं कराल दंड की शक्ति पर आधारित थी। छल और प्रवंचना सामन्ती वर्ग के सहायक और संगी थे, साथ ही उनमें आत्मभिमान था, जो प्रायः अहंकार की सीमा पार कर अधिकार का दुरूपयोग कर लेते थे। उच्च परिवार में विवाह सम्बन्ध, स्त्रियों में पर्दा आदि का तीव्र विरोध मीरा के काव्यों में हुआ है।

''धर्म जातां, धर पलट्ता, त्रिया पडंता ताव।
यह तीनों दिन मर बारां, कहां रंक कहां राव।।''

ऐसे सामन्ती संघर्ष और उत्पीड़न का युग जिसमें अस्थिर राजनीति आर्थिक विपन्नता और शोषण के कारण सामान्य जन–जीवन में एक अजीब असुरक्षा की भावना थी। भौतिक जीवन में सामन्त या राजा के अतिरिक्त भाग्य, भगवान और नियति का विशेष महत्व हो गया था। मीरा ने ऐसे सामन्ती परिवेश का अनुसरण न करके, वैराग्य का मार्ग अपनाया। उन्होंने मानव मात्र को ईश्वर की सर्वोच्च सत्ता का प्रिय सखा या सेवक सिद्ध करने का प्रयास किया। इस पद में उन्होंने कहा है कि –

''लाख लोक भय बाधाओं में विचलित नहीं हुई मीरा।
वार गई ब्रज रज पर माणिक मोती हीरा धारा।
हरि चरणामृत करके वह विष पचा गई गंभीरा।
नचा गई नटनागर को भी नाची तो बस मीरा।''

मध्यकालीन सामन्ती प्रथा का मीरा ने खुलकर विरोध किया है। जिन सामन्ती धर्माचार्यों ने नारी के लिए बड़े पुराण पढ़ने–सुनने पर प्रतिबन्ध लगा रखा था, उन्हें मीरा ने खुलेआम चुनौती दी–

''मैं हरिगुण गावत नाचूँगी
अपने मंदिर मों बैठ बैठ कर गीता भागवत बाचूँगी
ज्ञान ध्यान की गठरी बाँधकर हरि हर संग में नाचूँगी।'' [3]

दृढ संकल्पी मीरा की सामन्ती वातावरण के प्रति वाणी फूट पड़ी और वह कहती है :–

मोरो मन लोगों हरि सूं अव न रहूँगी हटकी।
चोट लगी निज नाम हरि की म्हारों हिवड़े खटकी।। [4]

मीरा के पति भोजराज के स्वर्ग सिधार जाने के बाद उनके जीवन में विषाद का अध्याय प्रारम्भ हुआ। सामन्ती वर्ग के विलास, झूठी शान और निरर्थक अहंकार, क्रूरता राजकीय मर्यादा को तोड़कर मीरा ने भक्ति का मार्ग अपनाया। सबकी सूनी, मगर की मन की , राज परिवार की बहू होकर कभी झूठे आडम्बरों को नहीं पहना। राज परिवार के सभी लोग उनका विरोध करने लगे। लेकिन उन्होंने कभी उनके सामने शीश नहीं झुकाया। किसी परिस्थिति से समझौता नहीं किया और कहती रही–

''सिसोदिया रूठयों तो म्हारो काई कर लेसी।
म्है तो गुण गोविन्द रो गास्या हो भाई।
राणोजी रूठयां वारो देश राखसी।
हरि रूठया कठै जास्या हे भाई।।'' [5]

जिस समाज, देश, वंश, परिवार और कुटुम्ब ने अपने विषयों सामाजिक बंधनों से जुड़कर रख दिया है। मीरा ने बार–बार उनका प्रतिरोध किया है। उन्होंने सीधे–सीधे चित्तौड़ के राणा को सम्बोधित किया। राणा जो एक व्यक्ति भी है और उस लोक एवं समाज का अधिष्ठाता एवं प्रतिनिधि भी है, जो अपनी सामाजिक संरचना में पुरूष के विषमतावादी कानून को ही न्यायोचित मानता है। इस विधान को जब मीरा ने तोडा तो उनको यातनाएं मिलती है। ऐसे समाज को मीरा ने अच्छा नहीं माना। उन्होंने राजसी सुख–सुविधाओं एवं विलास की ऊँची से ऊँची सामग्री को अहंकारी सत्ता, जन विरोधी, षड्यंत्री एवं कुटिल चालों वाला हैं, कहकर बहिष्कार कर दिया। मीरा ने ऐसे समाज में 'साधुता' को नहीं पाकर उससे दूर जाकर, वैभव के स्थान पर मानवीयता का पक्ष लिया। वह साफ–साफ राणा से कहती हैं–

''राणाजी थारो दे सड़लो रंग रूड़ो।
थारे मुलक में भक्ति नहीं है, लोग बसे सब कूड़ो।।'' [6]

राणा और मीरा के बीच विरोध बढ़ता ही जाता है। मीरा पर राणा अपना अपमानजनक रोष उतारता ही गया। मीरा और शेष परिवार के व्यक्तियों के बीच भी तीखापन आया। मीरा अपने रास्ते पर चलती रहीं। सत्ता के बदलते समीकरण और महाराणाओं को सूर्यवंशी होने के सामन्तीय अहंकार के चलते राणा परिवार ने मीरा को विषमान कराया उस परिस्थिति में रहना मीरा के लिए संभव नहीं था। इसलिए मीरा ने चित्तौड़ त्याग दिया। निम्न पद में वे कहती हैं–

''राणाजी थै क्यानै राखो म्हासूं बैर।
थै जो राणाजी म्हानै इसड़ा लागो, ज्यों ब्रच्छन में कैर।
महल अटारी म्है सब त्याग्या, त्याग्यो थारो बसतो सहर।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, इमरित कर दियो जहर।।''

मीरा साधु–संतो के बीच बैठती रहीं और अपने उच्च विचार भजनों के माध्यम से लोक जीवन तक पहुंचाती रहीं। कुछ ही समय में वे जनता के बीच लोकप्रिय हो गई। शायद यही कारण है कि मेवाड़ के सामन्ती परम्पराओं के सामने मीरा सदैव चुनौती बनी रहीं। शासक उनका कुछ नहीं बिगाड़ सके। मीरा ने जीवनपर्यन्त धार्मिक पाखंड़ो, आड़म्बरों, जाति तथा वर्ग की श्रेष्ठता का तीव्र विरोध किया। सामन्ती समाज के सामने संघर्ष किया, जिसे वह कंचन की तरह तपना कहती रहीं। उसके सामने बचने का कोई विकल्प ना होते हुए भी आत्मविश्वास बनाये रखा और निरन्तर विपरित परिस्थितियों में जूझती रहती है। जैसे–जैसे मेवाड़ी सामन्तों ने उन्हें परेशान किया, वैसे–वैसे वह ओजस्वी होती गई। अत्याचारों, बदनामी की परवाह करते हुए अपने संकल्प के प्रति और अधिक निष्ठावान होकर गाती रहीं–

''राणाजी म्हाने या बदनामी लागे मीठी।
कोई निंदो कोई बिंदो में चाल चलूंगी अनूठी।।'' [8]

इस प्रकार मीरा का अपना परिवेश सामन्ती था, जिसे ठुकराकर वह जन–जीवन के बीच ज्योति की किरण बनकर आई थीं। चित्तौड़ की जगह उन्होंने द्वारका के मंदिर को अपनाया। धर्म के क्षेत्र में भी आराध्य और आराधक के माध्यम को उन्होंने नकारा। वैधव्य ने जहाँ उनकी अस्मिता को उभरने का अवसर दिया, वहीं सामाजिक रूढ़ियों में जूझने का साहस भी दिया। इसलिए वे अपने परिवेश में द्वन्द्व की स्थिति में रही। उनकी सबसे

बड़ी विशेषता यह रही कि वे आध्यात्म के वैयक्तिक समीकरण के बावजूद सामान्य समाज के सुख–दुःख और विद्रोह में साथ रहीं। सुख–दुःख उनको भटका नहीं सका।

सामन्ती प्रथा का विरोध–मध्यकालीन सामन्ती प्रथा का मीरा ने खुलकर विरोध किया है। जिन सामन्ती धर्माचार्यो ने नारी के लिए बड़े पुराण पढने–सुनने पर प्रतिबन्ध लगा रखा था, उन्हें मीरा ने खुलेआम चुनौती दी। दृढ संकल्पी मीरा की सामन्ती वातावरण के प्रति वाणी फुट पड़ी और वह कहती है मेरो मन लोगों हरि सू अब न रहूँगी हटकी। चोट लगी निज नाम हरि की म्हारो हिवडे खटकी। वह आमजन को भी सामन्ती प्रथा के विरूद्ध जाग्रत करती है। मीरा अपने विरोधियों को सीधी चुनौती देती है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अनुसंधान पत्र में मीरा के काव्य में सामन्तवादी मानसिकता के विरोध वाले तत्वों को अध्ययन किया जा रहा है।

निष्कर्ष

जनमानस की कवियित्री मीरां स्वयं सामन्तवादी समाज से सम्बन्ध रखने के उपरान्त भी दलित तथा निम्नवर्ग को सम्मान देकर अपने काव्य की विद्रोहमयी वाणी द्वारा सामन्तवादी, परम्परागतवादी, अन्धविश्वासी, कुपरम्पराओं का विरोधपूर्ण तत्परता से करती है।

इनका काव्य राजस्थानी लोकजीवन का काव्य रहा है जिसमें लोकोत्सव, जनमानस, आंचलिक वातावरण, मनोविज्ञान, खेतिहर निम्न तथा दलित सम्बन्धी चित्रण भी मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मीरा सुधा सिन्धु : स्वामी आनन्द स्वरूप पृ., 185*
2. *मीरा सुधा सिन्धु : स्वामी आनन्द स्वरूप, पृ. 117*
3. *मीरा सुधा सिन्धु : स्वामी आनन्द स्वरूप, पृ. 368*
4. *मीराबाई की काव्य साधना :– डॉ. रामप्रकाश, पृ. 84*
5. *मीरा स्मृति ग्रंथ – मीरा का काव्य : डॉ. लक्ष्मीकांत शर्मा पृ. 166*
6. *मीरा व्यक्तित्व एवं कृतित्व : पद्मावती शबनम,पृ. 206*
7. *मरू मंदाकिनी मीरा : रतनलाल मिश्र, पृ. 76*
8. *मीरां व्यक्तित्व एवं कृतित्व : पद्मावती शबनम,पृ. 209*
9. *हिन्दी शब्द सागर– तृतीय भाग (सम्पा श्यामसुन्दरदास) पृ. 1576*
10. *हिन्दी साहित्य कोश (सम्पा. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा) पृ. 189*
11. *हिन्दी विश्वकोश (डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी)*
12. *मीरा सुधा सिन्धु (सम्पा. स्वामी आनन्द स्वरूप) पृ. 368*
13. *मीराबाई की काव्य साधना (डॉ. रामप्रकाश) पृ. 84*
14. *मीरा का काव्य (विश्वनाथ त्रिपाठी) पृ. 104*
15. *स्त्री चेतना और मीरा का काव्य (डॉ. पूनम कुमारी) पृ. 85*
16. *मीरा सुधा सिन्धु (सम्पा. स्वामी आन्नद स्वरूप) पृ. 379*
17. *मीराबाई की पदावली पद– 34*
18. *मीरा के पद (ह.लि.) क्र. 10862 पत्र 37*